मनुष्य बनो

शरणागति

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम,

निष्काम कर्म,

अल्पार्थ पालन,

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जॉय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य ५.२५ है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अंक निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

प्रकाशक

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

❋ मनुष्य बनो ❋

वर्ष २७ | भादों सं० २०३४ वि० सितम्बर, १९७७ | संख्या १२

❋ सुरत की अवस्था ❋

रतन जड़ित एक पिंजड़ा बनाया ॥टेक॥
गुरु ने अमृत बचन सुनाया ॥
बाबा घर रहलों बबुई कहोलों सैयां घर भई लों सियान
चेते लों चर आयन हो ॥१॥

खेलखेलत रहलों सुपेली मोनिया आयल पिया के संदेश
उठे लों खीसिया झाड़ के हो ॥२॥

चुन चुन कलियां सिजिया बिछालों बिना पुरुष के नारि
रोवे ले निस बासर हो ॥३॥

दास कबीर गावें निर गुनबा संत जन कीजों विचार
बहुरि न जग आना हो ॥४॥

मनुष्य बनो का सत्ताइसवां वर्ष का १२वां अंक आपके हाथ में

प्रिय सतसंगी भाइयो, मनुष्य बनो पिछले २७ वर्षों से आपकी सेवा में लगा हुआ है जिसके द्वारा आप महर्षि शिवब्रत लाल वर्मन जी महाराज, परम दयाल फकीर चन्द जी महाराज एवं अन्य महा-पुरुषों के प्रवचनों का रसास्वादन करते हैं।

परन्तु क्या आप मानते हैं कि इतने वर्षों की लगन के बाद भी यह पत्रिका अपना भार उठाने में असमर्थ है। ऐसा क्यों? क्योंकि बहुत से भाई सिर्फ पत्रिका मँगाना ही अपना कर्तव्य समझते हैं। उसका चन्दा भेजना नहीं उनको बार २ सूचित करने पर भी वह चन्दा नहीं भेजते हैं। बहुत से भाइयों ने जो ३-३, ४-४ साल से अधिक से भी अपना चन्दा नहीं भेजा है। जिसकी वजह से पत्रिका को इस वर्ष करीब ६००) रु० का नुकसान वहन करना पड़ रहा है। अगर यही हाल रहा तो हमें मजबूरन पत्रिका को बन्द करना पड़ेगा। पाठकों को यह भी ज्ञात कर देना आवश्यक समझते हैं कि इस पत्रिका के संचालन के लिये कार्यालय में कार्य करने वाले कर्मचारी सम्पादक, प्रकाशक सभी निस्वार्थ एवं निःशुल्क सेवा में लगे हैं भाइयों से जो चन्दा एवं दान का पैसा आता है वह पत्रिका का कागज, छपाई व डाक का खर्चा भी पूरा नहीं कर पा रहा है।

अतः समस्त भाइयो से निवेदन है कि पत्रिका का बकाया शुल्क शीघ्र ही भेजकर साथ नवीन ग्राहक बनाकर इस शुभ कार्य में हाथ बढ़ायें।

—प्रकाशक

श्रीमती सुधा मीतल

मौज मालिक मनुष्य बनो मौज मालिक

दयाल मानवता प्रचारक सभा (रजिस्टर्ड) राजेन्द्र नगर नई दिल्ली का २६ वां वार्षिक दशहरा

मानवता संत सम्मेलन

"कबीरा इस संसार में चहुँ दिशि लागी आग,
संत न होते जगत में, तो जल मरता संसार।"

दशहरा के शुभ अवसर पर सलवान पबलिक स्कूल राजेन्द्र नगर (ओल्ड) नई दिल्ली में दिनाँक २१-२२-२३ अक्तूबर १९७७ को परम संत हजूर पीरेमुगां जी महाराज की अध्यक्षता में होगा।

सज्जनो :—इस समय सारे संसार में अज्ञानता के कारण अशान्ति तथा दुःख के बादल छाये हुये हैं। संत बार-बार कहते हैं कि इस दुःख और क्लेश की आग से निकलो। मानव बन कर सुख शान्ति और आनन्द का जीवन व्यतीत करो।" हर बर्ष की भान्ति इस वर्ष भी दशहरा के शुभ अवसर पर हिज होलीनैस परम संत परम दयाल हजूर पं० फकीर चन्द जी महाराज (होशियारपुर वाले) अपने ९२ वर्षीय अनुभव एवम् तपस्या के आधार पर बड़े सरल रूप में आपको बतायेंगे कि दुःखों की ज्वाला से किस प्रकार निकल कर ग्रहस्थ में रहते हुए मानव बनकर सुख, शान्ति, आनन्द और अचिन्तन रहते हुए हम मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। उनके अतिरिक्त हजूर संत आनन्द राव उर्फ दयालानन्द जी महाराज (हैदराबाद) हजूर संत ताराचन्द जी महाराज (हरयाणा), हजूर संत दर्शन सिंह जी महाराज आचार्य रूहानी सत्संग दिल्ली तथा अन्य महा अनुभवी पुरुष अपने विचार सम्मुख रखेंगे। ठीक समय पर अपने मित्रों सहित पधार कर इस अनमोल और शुभ अवसर का लाभ उठायें।

नोट :—लंगर और ठहरने का प्रबन्ध देहली से बाहर के आने वाले प्रेमी भाईयों के लिये पहले की भान्ति दयाल मानवता प्रचारक सभा की ओर से होगा, परन्तु यह प्रबन्ध केवल २१ अक्तूबर (प्रातः व सायं) और २२ अक्तूबर केवल प्रातः के लिये होगा। अपने साथ

बाहर से आने वाले प्रेमी सज्जन २०-१०-७७ को सलवान स्कूल में किसी भी समय आकर ठहर सकते हैं।

प्रोग्राम

२१ अक्तूबर १९७७ (शुक्रवार) प्रातः ९ बले से ११ बजे तक

" " " " सायं ३ बजे से ५ बजे तक

२२ अक्तूबर १९७७ (शनिवार) प्रातः ९ बजे से १२ बजे तक

२३ अक्तूबर १९७७ (रविवार) प्रातः ९ बजे से १२ वजे तक

२३-१०-७७ के सत्संग में केन्द्रीय स्वास्थ मंत्री श्री राजनारानण जी पधार रहे है।

दयाल मानवता प्रचारक सभा की ओर से एक धार्मिक लाइब्रेरी स्थापित है जिसमें महर्षि शिवव्रत लाल जी वर्मन, परम दयाल फकीर साहिब तथा अन्य संत महात्माओं की पुक्तकें हैं। प्रेमी सज्जन निम्नलिखित पते पर सभा के कार्यालय में पधार कर लाभ उठा सकते है।

निवेदक तथा दर्शनाभिलाषी :—नन्दलाल सचदेवा उर्फ आनन्द दयाल, आनरेरी सैक्रेट्री, दयाल मानवता प्रचारक सभा (रजिस्टर्ड), दुकान न० १०६ (के पीछे) शंकर रोड मार्किट, न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली–६०

धन्यवाद

श्रीमती रामसुन्दरी देवी विहार ने १०) रु० एवं श्रीमती बुध बन्ती देवी मार्फत तेजेन्द्र मणि गुप्ता भीलवाड़ा ने ५२) रु० मनुष्य बनो की सहायतार्थ भेजे हैं। मनुष्य बनो इसके लिये इन बहिनों का अत्यन्त आभारी है एवं मालिक से उनके दीर्घ जीवन एवं सुख शान्ति के लिए कामना करता है।

श्री जयप्रकाश नारायण को पत्र लिखने का कारण

मैंने श्री जयप्रकाश नारायण को कल पत्र लिखा है और उसे भिन्न २ प्रेसों में भेज दिया है। मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि तेरे इस कार्य से क्या लाभ है। यह तू जानता भी है कि कई आदमी इस पत्र को पढ़ करके हंसी उड़ायेंगे। कोई भ्रामग्रस्त कहेगा। फिर तू ऐसा क्यों करता है? रात को इसी सोच विचार में रहा।

डाक्टर जब कोई बीमारी का टीका लगा देता हैं तो टीका अपना प्रभाव किये बिना नहीं रहता। एक विचार दिया था दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी, महाराज ने। १९३३ में सुनाम स्टेशन पर कहा था कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। वह ख्याल मेरे दिमाग में प्रभाव किये हुये हैं। और बेबसी की हालत में ही काम करता हूं, मगर मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ, कि जो कुछ तूने लिखा है क्या यह तेरा ख्याल और तेरे विचार ठीक है?

हाँ! यह ठीक है। क्योंकि इन्सान के ख्याल में ताकत है। यह मनोमय संसार है, माया देश है। मुझे कैसे विश्वास हुआ कि ख्याल में शक्ति है? लोग अपने ख्याल, विश्वास और श्रद्धा से मुझे याद करते हैं, और मेरा रूप बनाते हैं। वह जो अपना ख्याल, विश्वास और अपनी श्रद्धा से रूप बनाते हैं, वह रूप उनकी मदद स्वप्न और जाग्रत में करता है। मुझे पता नहीं होता तो सिद्ध हो गया कि इन्सान के विचार में बड़ी भारी ताकत है। इसका दूसरा प्रमाण यह है कि सूर्य की गर्मी समुद्र से पानी को खींचती है। जिस समय वह खींचती है तो क्या वह चीज जो पानी से निकली, किसी को नजर आती है? नहीं। मगर जब वहीं सूक्ष्म बुखारात आकाश पर गये उसका क्या परिणाम निकला? वर्षा हुई और बाढ़े आ गई। नुकसान हुए। इसी तरह से मेरी समझ में यह आया कि हमारे अन्दर से जिस प्रकार के विचार

(शेष पृष्ठ ८ पर)

परम संत दयाल फकीरचन्द जी महाराज की यात्रा का कार्यक्रम

प्रस्थान स्थान समय गाड़ी नम्बर	मुकाम जलंधर	विवरण
१ तारीख २०-१०-७७ होश्यारपुर से १.३५ बजे गाड़ी नं 5 JHUP	२.५० पी.एम.	
,, जलंधर से दिल्ली के लिये ३४ डाउन समय ६·४७ पी.एम.	दिल्ली पहुँच ५ ए. एम. ता० २१-१०-७७	ता० २५-१०-७७ तक पब्लिक सालवान स्कूल पुराना राजेन्द्र नगर में विश्राम व सतसंग
२ २५-१०-७७ दिल्ली	हवाई जहाज से वाराणसी और वाराणसी से राधास्वामी धाम गोपीगंज कार द्वारा	३०-१०-७७ तक धाम में विश्राम तथा सतसंग
३ ३०-१०-७७ धाम से कानपुर गाड़ी नं० ११ अप	कानपुर पहुँच ८ पी. एम. ३०-१०-७७	श्री हंसराज घई के स्थान बंगला नं० २७ ए हार्डिंग रोड पर सतसंग व विश्राम २-११-७७ तक
४ कानपुर से सीतापुर मिश्रीक तीर्थ के लिते १२.२० बजे ६२ डाउन से ता० २-११-७७ को प्रस्थान	८.१५ पी. एम. को ६२ डाउन से सीतापुर पहुँचना	सतसंग विश्राम श्री कृष्णमोहन श्रीवास्तव के निवास पर ४-११-७७ तक

५	सीतापुर से लखनऊ वास्ते ५ बजे कार द्वारा सुबह ८.५२ को ५१ अप से मुरादाबाद को प्रस्थान ५-११-७७ को	मुरादाबाद से कार द्वारा बिलारी शाम तक पहुँच	बिलारी मुकाम श्री चन्द्रकुमार जी शर्मा एडवोकेट के भवन पर ६-११-७७ को सतसंग
६	बिलारी से कार द्वारा सरसोंहेडी के लिये प्रस्थान और मुरादाबाद से ३.३५ को ५१ अप द्वारा सहारनपुर ७-११-७७	रात ८ बजे सहारनपुर पहुँच	लाजपतराय जी के यहां विश्राम
७	७-११-७७ से ११-११-७७ तक सरसोंहेड़ी विश्राम व सतसंग		
८	१२-११-७७ को सरसोंहेड़ी से सहारनपुर कार से आकर १०.५० ए. एम. को ३७२ डाउन से दिल्ली के लिये प्रस्थान	दिल्ली ५.२० शाम को पहुँच	विश्राम श्री नन्दलाल जी सचदेव के मकान १३-११-७७ तक
९	१४-११-७७ को कार से संत ताराचन्द जी के आश्रम दिनोद के लिये प्रस्थान		१६-११-७७ तक दिनोद में राधास्वामी सतसंग भवन में विश्राम
१०	१७-११-७७ को दिनोद से कार द्वारा दिल्ली	दिल्ली से २०.५५ रात को ३३ अप से होश्यारपुर के लिये वापसी	होश्यारपुर १८-११-७७ को को प्रातः ६.२५ पहुंच को प्रातः ६.२५ पहुंच

(नोट—यह कार्यक्रम सेहत पर निर्भर करेगा)

निकलते हैं और भाव उठते हैं, अगर यह बढ़ते रहे तो यह इस तरह से स्थूल बन करके प्रगट होंगे। जिस तरह से वर्षा और बाढ़े प्रगट होती है।

इसी नियम के आधार पर मैंने श्री जयप्रकाश नारायण को लिखा कि यह वर्तमान चुनाव प्रणाली इस प्रजातन्त्र में सामूहिक तोर से घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, स्वार्थ और हेराफेरी पैदा करता है और उसका परिणाम कभी भी देश के लिऐ शान्तिदायक नहीं होगा।

मुझे यह एक ऐसा विश्बास हो गया है और मैं हौंसला से कहता हूं कि जब तक यह आपसी नफरत, द्वेष और ईर्ष्या के विचार कम नहीं होंगे तब तक मानव जाति का भविष्य खतरे में रहेगा। वर्तमान हड़तालें, घेराव और गुटबन्दियां ये सब घृणा और द्वेष के भाव के कारण ही पैदा होते हैं।

"कहने से था हमें सरोकार,
मानो, न मानो, आप हैं मुखताप।"

(दयाल फकीर)

—०—

हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मंदिर होशियारपुर

सत्संग

प्रातःकाल

दिनांक १३ अप्रैल १९७७

राधास्वामी ! मैं सोचता हूँ कि फकीर ! तुम यह काम क्यों करते हो ? जब राम की दुनियां से वैराग्य हो गया और उदासी आ गई तो महाराजा दशरथ ने उनको गुरु वसिष्ट के पास भेजा। रामचन्द्र जी ने गुरु वसिष्ट जी से कहा कि मैं दुखी हूँ। वसिष्ट जी ने कहा कि राम ! तुम ब्रह्म के अवतार हो और किसी विशेष काम के लिये संसार में आये हो। क्या मिशन बताया ?

दैव दैव आलसी पुकारा करते हैं। इस एक विचार को लेकर रामचन्द्र जी ने राक्षसों को मारा और दुनियां में क्या कुछ नहीं किया। ऐसे ही मैं भी संसार से दुखी होकर २४ घन्टे लगातार रोने के बाद अपने एक दृश्य द्वारा हजूर दातादयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज के चरण कमलों में गया था। उन्होंने मुझे फरमाया—

१. तू तो आया नर देही में धर फकीर का भेसा।
दुखी जीव को अंग लगाके लेजा गुरु के देसा॥
तीन ताप से जीव दुखी हैं निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई नाम दान दे दानी॥

२. तेरा रूप है अद्भुत अचरज तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत में आया परम दयाल सनेही॥

३. ले परशाद यह सत्संग का होजा भव निधि तारन।

मेरे जिम्में तीन कर्तव्य हैं। इनको पूरा करने के लिये मैं घसीटा जा रहा हूँ। अपने आपसे पूछता हूँ कि तू संसार को क्या कहना चाहता है? सुनो! मैं बचपन से ही राम को मिलने निकला था। कभी-कभी मैं प्रेम में आकर गाया करता था—

वतन दुराड़ा देश दुराड़ा पईयां मैं लम्बड़े राहीं।
साईं मैंनो तोड़ पहुँचाईं॥

अब मैं अपने आपसे पूछता हूँ कि क्या तू तोड़ पहुँच गया। तोड़ क्या पहुँचना था। जब मैं तोड़ पहुचता हूँ तो मैं ही नहीं रहती। फिर पहुँचेगा कौन? यह मेरा अनुभव है। मैं बैसाखी के इन चार सत्संगों में अपना अनुभव कहना चाहता हूँ। पहली बात तो यह है कि हम नाम लेते है और यह आशा करते हैं कि गुरु हमको सतलोक ले जायेगा और हमारी मुक्ति हो जायेगी। इसलिये लोग गुरुओं की सेवा करते हैं, रुपये देते हैं और गुरुओं के पाँव धो के पीते हैं और गुरुओं के गुण गाते हैं। मैंने बहुत कुछ किया। अब मैं अपने आपसे पूछता हूँ कि फकीर! क्या तेरी मुक्ति हो गई? क्या राम राम जपने

से या राधास्वामी २ जपने से या गुरु की सेवा करने से आदमी की मुक्ति हो सकती है ? नहीं । क्यों ? विज्ञान ने सिद्ध किया हैं कि मरने वाले के अन्तर से कोई चीज निकलती है । परदा (Screen) पर कोई विशेष मसाला लगाकर उन्होंने सूक्ष्म शरीर का फोटो भी देखा । मरने से पहले आदमी का वजन किया और मरने के तुरन्त बाद तोला तो कोई दस ग्राम, कोई बीस ग्राम कोई पच्चीस ग्राम कम हुआ । क्यों ? मेरे अनुभव में यह बात आई है कि जो चीज हमारे शरीर में रहती हुई सबकी साक्षी है । प्रकाश को देखती है और शब्द को सुनती है वह एक अलग चीज है । जब कभी मैं अपने आपको अलग करके देखता हूँ तो उसका तोल नहीं है । फिर उसका वजन क्यों आता है स्थूल चीजों की वासनाओं के कारण उसका वजन होता है । जब तक किसी आदमी का राम के रूप से, कृष्ण के रूप से, गुरु के रूप से, किसी तीर्थ से या किसी भी स्थूल चीज से प्रेम है या लगाव है तो उस प्रेम या लगाव के कारण उसका सूक्ष्म शरीर भारी होगा और भारी होने के कारण पृथ्वी की आकर्षण शक्ति उसको ऊपर नहीं जाने देगी बल्कि दक्षिण की ओर लायेगी । इस कारण धर्मराज और यमराज का डेरा दक्षिण की ओर माना गया है । हजूर दातादयाल जी महाराज ने भवसागर से पार करने का कर्तव्य लगाया है । मैं किसी को फूंक तो मार नहीं सकता । सच्चा ज्ञान देता हूँ । जो आदमी इस पर अमल करेगा वह पार होगा । अगर वासनायें होंगी तो सूक्ष्म शरीर भारी होगा यह तो है विज्ञान । हजूर महाराज राय सालिगराम साहिब जी महाराज जिन्होंने यह पंथ चलाया है । उन्होंने अपनी प्रेम वाणी में लिखा है कि अन्त समय जीव के सामने फिल्म चलती है, गुरु भी आ जाता है और शब्द भी सुना देता है फिर उसको कुछ समय ऊपर के लोकों में रहना पड़ता है । फिर जब कोई सन्त सतगुरु इस संसार में आता है तो वह जीव भी चोला धारण करके इस संसार में आता हैं और उस सन्त सतगुरु के सम्पर्क में आकर बाकी की कमाई पूरी करके अपने निज घर पहुँच जाता है । इससे सिद्ध हुआ कि जो आदमी किसी की देह से प्रेम करता हुआ मरेगा उसको भी दूसरा चोला लेना पड़ेगा । यह दूसरी बात है कि उसको चोला अच्छा

मिले और वह नेक बने। हजूर बाबा सावनसिंह जी फरमाया करते थे कि जिनको हरिद्वार से प्रेम है वे हरिद्वार की मच्छलियां बनेंगे। अब जिनको होशियारपुर से या व्यास से प्रेम है वे होशियारपुर या व्यास की मच्छलियां बनेंगे। और सुनो ! सनातनधर्म कहता है कि पहले २५ साल ब्रह्मचारी रहो फिर गृहस्थ आश्रम फिर बानप्रस्थ में आओ। स्त्री साथ रहे मगर मियां बीबी बनके न रहो फिर सन्यास ले लो। सन्यासी के लिए आज्ञा है कि वह तीन दिन से ज्यादा एक जगह न रहे ताकि किसी वस्तु के साथ उसका मोह न हो जाये। जड़ भरत ने हिरण का बच्चा पाला था। वह बच्चा बड़ा होकर भाग गया। क्योंकि उसके साथ प्रेम था इसलिए मरने के बाद जड़भरत हिरण के चोले में गया। मैं अपना अनुभव क्यों कहना चाहता हूँ ? गुरु आज्ञा वश। मेरे ग्रह ही ऐसे हैं। मैं आया ही इस काम के लिए हूँ और यह काम करने के लिए विवश हूँ। इसलिए जो आदमी आवागवन से बचना चाहते है उनसे कहना चाहता हूँ कि जो गुरु यह कहते हैं कि नाम ले लो तुम सतलोक पहुँच जाओगे यह गलत है जब तक किसी आदमी का मरते समय किसी भी स्थूल चीज से मोह है और लगाव है वह पारन हीं जा सकता, ये महापुरुष आये हुए हैं। मैंने इनको यहां की रोनक बढ़ाने के लिए नहीं बुलाया। इनको यहां इसलिए बुलाया है कि जो कुछ मैं अपना अनुभव वर्णन करता हूँ अगर यह गलत है तो ये मुझे बताये ताकि मैं अपना सुधार करूँ और दूसरों को भी ग़लत शिक्षा न दूँ। मुझे किसी बात का कोई दावा नहीं लेकिन पवित्र विभूति राय सालिगराम साहिब जीं महाराज और हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज और सत कबीर की बाणी अनुसार में यह कह सकता हूँ कि मेरा अनुभव ठीक है। मरते समय कई लोग कहते है कि हमको लेने के लिए बाबा फकीर आये हैं पालकी या घोड़ा या हवाई जहाज लाये हैं मगर मुझे कोई पता नहीं होता और न ही मैं जाता हूँ। इसलिए तो मैं कहता हूँ कि मैं अवतार लेकर आया हूँ इन गुरुओं, धर्मो और पंथों ने हमको में अज्ञान रखकर लूटा है। इसलिए मैं कह रहा हूँ कि अगर मैं गलत हूँ तो ये महात्मा मेरा

खण्डन करें। मरने से पहले अगर किसी के मस्तिष्क में गुरु, बाप बेटा धन-धान्य अर्थात कोई भी स्थूल चीज है तो चाहे उसने लाख अभ्यास किया हुआ है जमीन की किशश उसको ऊपर नहीं जाने देगी।

हम भोले भाले जीव हैं। गीता में श्री कृष्ण ने कहा है कि जो कुछ है वह मैं ही हूँ और सब कुछ मेरे सुपुर्द कर दो। राधास्वामी दयाल ने कहा है—

यह करनी मैं आप कराऊँ, पहुँचाऊँ घुर दरबार।
तुम निश्चित रह करूँ प्यारा॥

जो आदमी इस बाणी को पड़ेगा वह यही समझेगा कि गुरु स्वयं ही करनी करा देंगे। हजूर दातादयाल जी महाराज ने लिखा है "आ जा शरन बचा लूँगा।" कबीर साहिब ने लिखा है कि मैं ही सब कुछ हुँ। हजरत ईसा मसीह ने कहा है कि मैं खुदा का बेटा हूँ मेरी शरन में आओ। यह सब अहंभाव है। मगर किसी समय ऐसा करना भी पड़ता है। क्यों! क्योंकि जीव नादान हैं। उनको समझ नहीं। अगर इस विचार से ऐसी बात कही जाये कि जीव का भला हो तो वह धन्य है। लेकिन अगर स्वार्थ के विचार से कहा जाता है तो यह महा पाप है। तो हम किधर जायें? सब धर्म और पंथ हमको अपनी ओर खींचते हैं इसलिए मैं आप लोगों से कहना चाहता हूँ कि ऐ मानव! तू किसी के पीछे मत जा। सच्चा बनके अपने अन्तर प्रार्थना कर। वह मालिक घट घट में है। जहां तुम्हारे अन्तर सच्चाई आई प्रकृति स्वयं प्रबन्ध करेगी। क्या मैं गुरु को ढूँढने गया था? अगर मुझे पहले यह पता होता तो राधास्वामी मत में न जाता। कौन हिन्दू यह सुन सकता है कि राम और कृष्ण काल के अवतार हैं। मैं रोया करता था कि मालिक! मैं तो तुमको मिलने निकला था यहाँ कहां फंस गया। लेकिन प्रकृति मुझे वहाँ ले गई जहां मेरी कुरेद समाप्त हुई। इसलिए सच्चे दिल से प्रार्थना किया करो। मांगो वह मालिक देगा। किसी धर्म के पीछे जाने की आवश्यकता नहीं। मैंने पथों धर्मों को देखा इन्होंने संसार को अपने पीछे लगाया।

मेरी आँख खुल गई। मुझे प्रतिदिन पत्र आते हैं कि आपका रूप प्रकट हुआ यह किया और वह किया मगर मुझे कोई पता नहीं होता। सब तुम्हारे ही मन का खेल है इसलिए सच्चे बनो और अपनी नीयत को साफ रखो। मैं किसी को धोखे में रखना नहीं चाहता। तुम लोग मेरे पीछे या दूसरे गुरुओं के पीछे दौड़ते हो तो क्यों? गुरु नाम है सच्चे ज्ञान का। अनुभव और विवेक का। उसको पकड़ो तब कल्याण होगा।

मैं अपनी जिम्मेदारी को महसूस करता हूँ। इसलिए मैं सारे संसार को संदेश दे रहा हूँ कि जो कुछ तुम्हारे अन्तर प्रकट होता है वह जिस प्रकार के संस्कार Suggestions & Impressions आदमी के मस्तिष्क पर पड़े हुये होते हैं वही रूप की शकल में तुम्हारे सामने आते हैं न बाबा फकीर बाहर से तुम्हारे अन्तर आता है और न कोई और गुरु। न राम बाहर से तुम्हारे अन्तर आता है और न कृष्ण। इसी एक अज्ञान और परदे के कारण हम मानव जाति नाना प्रकार के धर्मों और साम्प्रदायों में बट गये। असल में हम सब एक हैं। मैं अपना कर्तव्य सचाई से वर्णन किये जा रहा हूँ। मैं किसी के अन्तर नहीं जाता सम्भव है दूसरे महात्मा जाते हों मगर मैं नहीं जाता। क्योंकि ये महात्मा मेरे सामने मानते हैं कि हम भी नहीं जाते। इसलिए मुझे उत्साह है कि कोई भी किसी के अन्तर नहीं जाता। मगर ये महात्मा लोग मेरी तरह पब्लिक को नहीं कहते कि हम नहीं जाते। अगर ये महात्मा लोग दूसरों के अन्तर जाते हैं और उनके काम करते हैं तो ये धन्य हैं और अगर नहीं जाते और परदा रखकर लोगों से धन मान प्रतिष्ठा लेते हैं तो ये पापी हैं। इन महात्माओं को मैं इसलिए बुलाता हूँ कि ये सब लोगों को नाम देते हैं और चेले बनाते हैं लेकिन मैं किसी को चेला नहीं बनाता और न ही किसी को नाम देता हूँ। मैं केवल सत्संग करता हूँ ताकि जीवों को सीधा मार्ग और जीने का भेद मिल जाये। मैंने गुरु आज्ञावस शिक्षा को बदला है कि सच्चे बनो और अपने अन्तर में पुकार करो। वह मालिक हर जगह है। सच्ची पुकार को वह सुनता है और वह अवश्य पूरी होगी। वह मालिक तुम्हारे अन्तर है। उसका कोई रूप नहीं। जिस रूप में तुम उसको मानोगे

वह उसी रूप में तुम्हारी मनोकामनायें पूरी करेगा। लोग सच्चे दिल से मेरे रूप को याद करते हैं मेरा रूप प्रकट होकर उनके काम कर जाता है लेकिन मैं तो होता नहीं तो सिद्ध हुआ कि सब कुछ तुम्हारे अन्तर है और तुम्हारे विश्वास में है। हजूर दादादयाल जी महाराज ने एक शब्द में लिखा है—

ढूंढ मुझको अपने मन में मैं तो तेरे पास हूँ।
मैं न काशी हूँ न मथुरा मैं न गिरी कैलाश हूँ ।।
तू हुआ मेरा तो मैं भी देख तेरा बन गया।
कर भरोसा मेरा मैं ही तेरी सच्ची आस हूँ ।।
तेरे भीतर मेरी बैठक आँख से ले देख भाव।
मैं नहीं पृथ्वी की मूरत मैं नहीं आकास हूँ ।।

मैं किसी को धोके में रखकर अपना उल्लू सीधा करना नहीं चाहता। यह बिलकुल सच्ची बात हैं। तुम ध्यान करो चाहे किसी का भी करो मैं यह नहीं कहता कि मेरा करो। राम का ध्यान करो चाहे कृष्ण का ध्यान करो, देवी का करो, देवता का करो जिसकी इच्छा चाहे करो मगर एक का करो। जब ध्यान बन जायेगा तो तुम्हारा मनोबली (will power) बढ़ जायेगी और उससे तुम्हारे संसार के काम होते रहेंगे। बाकी रह गई मुक्ति। यह सबके भाग्य में तो है मगर समय आने पर।

"नानक कोटन में कोउ, नारायण जिन चेत"

जिस रूप का ध्यान करो उसको पूर्ण मानो और सब कुछ देने वाला मानो। तुम्हारे ही प्रेम और विश्वास का फल तुमको मिलेगा। वह आदमी कहता है कि बाबा जी ! मैं जब बीमार होता हूँ तो डाक्टर के पास नहीं जाता। आपको याद करता हूँ, आप प्रकट होते हैं, दवाई बता जाते हैं। मैं वही दवाई बाजार से लाकर खा लेता हूँ और स्वस्थ हो जाता हूँ। लेकिन मैं तो जाता नहीं। कौन जाता है ? सब जीव का अपना ही विश्वास है। मैं बीमार होता हुँ तो डाक्टर के पास जाता हूँ। अगर में उस आदमी के अन्तर जाकर उसको दवाई बता सकता हूँ और वह उससे स्वस्थ हो जाता है

तो फिर मैं अपने लिए भी दवाई खरीदकर स्वस्थ हो सकता हूँ और मुझे डाक्टरों के पीछे फिरने की क्या आवश्यकता है। सोचो। यह सब आदमी का विश्वास और श्रद्धा काम करती है। ससार भ्रम में आकर गुरुओं के आगे नाक रगड़ता है और लुटा जा रहा है। मैं संसार को इस लूट से बचाने के लिये आया हूँ। सुना करते थे कि अमुक साधु जो अमृतसर में या लाहौर में रहता है उसको हरद्वार और दिल्ली में देखा गया यद्यपि वह उस दिन अमृतसर या लाहौर में अपने आश्रम में मोजूद था। अब मेरा रूप जगह-जगह लोगों के अन्तर प्रकट होता है या साक्षात रूप में लोग मुझे देखते हैं और बातें करते है लेकिन मैं तो जाता नहीं हूँ। तो सिद्ध हुआ कि यह सब आदमी का अपना ही विश्वास है ओर मन का खेल है मगर किसी ने यह सचाई बताई नहीं और संसार को अज्ञान में रखकर मान प्रतिष्ठा और धन लिया। चार दिन का जीवन है मैं अपने आपको साफ रखके जाना चाहता हूँ। जिसकी इच्छा करे मेरे पास आये जिसकी इच्छा चाहे न आये। मेरी कोई किताब पढ़े या न पढ़े। जिसकी इच्छा हो चार पैसे मंदिर में दे जिसकी इच्छा हो न दे। मैंने क्या लेना है। मंदिर चले या न चले मुझे इससे कोई मतलब नहीं मगर मैं अपनी आत्मा को गन्दा रखके नहीं जाना चाहता। मैंने बड़े २ सन्तों और महात्माओं की दशा देखी। उनमें से कोई कई बुरी मौत मरे और भारी कष्ट उठाया। मैं सोचता हूँ कि आदमी भक्ति करता है उसको भी कष्ट हुआ और जो नहीं करता उसको कष्ट हुआ तो फिर भक्ति करने से क्या लाभ ? कर्म बुरा है इसलिए कष्ट हुआ। इस वास्ते राम २ बेशक थोड़ा जपो मगर अपने कर्म को ठीक रखो और अपनी नीयत को साफ रखो और किसी से धोखा फरेब मत करो। हजूर दातादयाल जी महाराज के शब्द बहुत ऊँचे थे मगर कर्म अनुसार जब अन्तिम आयु में उनको राहु आ गया वह स्वयं ही धाम छोड़कर चले गये इसलिए मैं इन महात्माओं से कहूँगा कि सचाई वर्णन करो मगर इनको भी मैं दोषी नहीं ठहराता क्योंकि तुम लोग भी सच्चाई सुनने के लिये तैयार नहीं हो। देखो ! मेरा मन्दिर बना देने से या मुझे रुपये देने से तुम्हारी मुक्ति नहीं होगी अगर रुपया देने से

किसी की मुक्ति हो सकती होती तो ये पैसे वाले लोग सब मुक्त हो जाते और बेचारे गरीब इससे वंचित रहते। यह तो संसारिक व्यवहार है। रुपया दोगे रुपया मिलेगा। किसी दुखिये की सहायता करोगे तो तुम्हारी भी सहायता होगी। मान दोगे मान मिलेगा और गाली दोगे तो गाली मिलेगी। मुक्ति तब मिलेगी जब सत्संग में जाकर गुरु का सत्संग सुनोगे, समझोगे और उस पर अमल करोगे। यह है गुरु की भक्ति—

दर्शन करे बचन पुनि सुने, सुन सुन कर फिर मन में गुणे
गुण गुण काढ़ लेते तिस सार, काढ़ सार तिस कते आहार
कर अहार पुष्ट हुआ भाई, जग भव भय सब गई गंवाई

मुझे खुशी है कि मैंने जीवन भर किसी से धोका फरेब नहीं किया और हर एक पहलू से मैंने अपना कर्तव्य पूरा किया है। मैंने जीवन में जो समझा और अनुभव किया वह कहा। मैंने किसी की नकल नहीं की। हो सकता है कि मैंने जो समझा और अनुभव किया वह सारे का सारा गलत हो। इसलिए अगर मैं गलत हूँ तो मेरा बड़ी खुशी से खण्डन करो। मुझे कोई दुख नहीं। अगर दूसरों को अपना अनुभव कहने का अधिकार है तो मुझे भी अधिकार है। दूसरों ने तो दावा किया होगा मगर मुझे कोई दावा नहीं। जो कुछ मैं कहता हूँ क्योंकि बाणी इसकी पुष्टि करती है इसलिए मैं समझता हूँ कि यह ठीक है। अब जो कुछ प्रोफेसर वशिष्ट जी ने कहा है यह ठीक है मगर मैंने जब महात्माओं की दशा देखी तो मैं डर गया। पहले आत्मा फिर परमात्मा। मुझे अपनी जान प्यारी है। अगर मेरे पास कुछ है तो मुझे पता नहीं। एक आदमी मेरे पास आकर अगर यह कहता है कि बाबा जी ! आपका रूप प्रकट हुआ और यह किया और वह किया। मुझे रुपये देता है और मेरी सेवा करता है। अगर मैं उसकी दी हुई चीजों को खा जाऊँगा तो क्या मैं दोषी नहीं ? क्योंकि मैं तो गया नहीं और न ही कुछ किया है हजूर दात दयाल जी महाराज का उपकार है। उन्होंने फरमाया था कि फकीर तू जगत गुरु है। जगत गुरु कौन है ? जिसको रचना का ज्ञान है कि यह रचना कैसे बनती है और कैसे बिगड़ती है। वह जगत गुरु है। एक आदमी सारे संसार का गरु

नही हो सकता। मैं प्रोफेसर वशिष्ट जी के साथ सहमत हुँ। लेकिन मैं पी.एच.डी. और एम ए. क्लास को पढ़ाता हूँ। मेरी शिक्षा से छोटी श्रेणी वालों को हानि भी होती है मगर मैं उनकी हानि को देखूँ या अपने आपको देखूँ। सन्तों की दशा को देखकर मैं डर गया। इसलिए मैं सच्चाई वर्णन करता हूँ। मैंने क्या लेना गुरुयाई से ? अगर मैं गलत हूँ तो मैं दोषी नहीं क्योंकि मेरी नीयत साफ है और जीवन में मैंने अपने निजी स्वार्थ के लिये किसी को धोखा नहीं दिया। मेरे पास दुखी लोग आते हैं मै उनको शुभ भावना देता हूँ और प्रशाद देता हूँ लेकिन एक मृगु संगता वाले पण्डित ने मुझे कहा था कि आप प्रशाद देना और आर्शीवाद देना बन्द कर दीजिए वरना आपको दूसरा जन्म लेना पड़ेगा। सच है या झूठ है इसका मुझे पता नहीं मगर मैं यह सोचता हूँ कि आर्शीवाद देने से और प्रशाद देने से अगर किसी का भला होता है तो मेरा इसमें क्या हर्ज है मैं तो कुछ करता नहीं दूसरे का विश्वास काम करता है।

आप लोगों ने इन महात्माओं के वचन सुने। मैं नहीं कहता कि आप मेरी बात को मानो क्योंकि मैं किसी का ठेकेदार नहीं हुँ। मैं तो अपना कर्तव्य जो हजूर दातादयाल जी महाराज ने मेरे जिम्मे लगाया हुआ है उसको पूरा कर जाना चाहता हूँ और मैं आवाज देता हूँ कि एक जगह विश्वास रखो वो शक्ति हर जगह मौजूद है और अपने अन्तर सच्चे बनकर प्रार्थना करो वो जरूर सुनता है। यह जरूरी नहीं कि तुम किसी गुरु के ही पास जाओ और उस पर विश्वास करो। तुम अपने अन्तर अपनी आत्मा पर विश्वास करो। आनन्द राव ! मैं तुमको शपथ देता हूँ कि अगर मैं गलती पर हूँ तो मेरा खण्डन करो। मुझे यह कोई दावा नहीं है कि जो कुछ मैं कहता हूँ यही ठीक है ; हजूर दातादयाल जी महाराज की आज्ञा थी यह काम करने की। इसलिए घसीटा जा रहा हूँ। मगर इतना अवश्य कहूँगा कि जो कुछ मैं कहता हूँ इसके बिना धार्मिक इकट्ठे नहीं हो सकते। आजकल गुरुओं के आपस में झगड़े हो रहे हैं और मुकद्में बाजीयां हो रही हैं। यह कहां का गुरुवाद है ? इन्होंने

गुरु महम आदि अनन्त अद्भुत अमल अगम अगोचरम् ।
विग्रु विराज पार अपार निर्गुण सगुण सत्य विश्वेश्वरम ॥
जेहि मति लखे नहि मति लखे यह शुद्ध तत्व विचार है ।
जो चरन कमल की ओर आया, भव से बेड़ा पार है ॥

गुरु शब्द स्वरूप है और उसके चरण प्रकाश हैं । सनातनधर्म इसको शब्द ब्रह्म और पारब्रह्म कहता है । मैं कुछ नहीं करता तुम्हारा विश्वास करता है । चार दिन के जीवन के लिए मैं क्यों हेराफेरी करूँ । मेरा कर्म मेरे साथ जायेगा । मेरी नीयत साफ है । दोष नीयत पर होता है । मेरा वह भी कभी समय था जब मैं प्रेम और विरह में शब्द गाया करता था और रोया करता था लेकिन जबसे मुझे पता लगा कि मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होता है और उनके काम कर जाता है लेकिन मैं नहीं होता तो मुझे मन के रूप को समझ आ गई और मैं मन को छोड़कर ऊपर चला गया और दोपना अर्थात द्वन्द समाप्त हो गया । ऐसा होना ही था । ये दर्जे हैं अब मेरा वह समय बीत गया । मुझ पर गुरु की दया क्या हुई ? सुनो । मैंने हजूर दातादयाल जी मसाराज से बहुत प्रेम किया । मैंने तम्बूरा बजाया । उनके दरवार में गाया और नाचा । उन्होंने मुझे गुरु पदवी दी और फरमाया कि तुमको सच्चे सतगुरु के दर्शन सत्संगियों के रूप में होंगे और अब मुझे आप लोगों के दर्शन हो गये । मंजल का पता मुझे आप लोगों से केवल इस एक बात से लगा कि आपने बताया कि मेरा रूप आप लोगों के अन्तर प्रकट होकर आपके काम कर जाता है । क्योंकि मैं नहीं होता इसलिए मैं मन के रूप को समझ गया । अब मन से परे उस मालिक की तलाश में जाता हूँ वहां उस चीज को तलाश करता हूँ जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है ओर शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है । उसका अन्त नहीं मिलता । घर का मुझे पता लग गया । हमारा घर वह है जहां न रूप है न रंग हैं, न प्रकाश है और न शब्द है । वहां अभी तक मुझसे ठहरा नहीं जाता । तुम्हारी बदौलत मुझे यह समझ आई । यह है मुझ पर गुरु की दया । बाकी मेरा अपना ही जज्बा था । उसका मैंने आनन्द लिया ।

सबको राधास्वामी !

क्रमांक से आगे सती कलावती

रानी अब इस योग्य नहीं रही कि उसको महल में रक्खा जाये। यही उत्तम है कि मैं उसे देश से निकाल दूँ।' ईर्षा की अग्नि महा प्रचण्ड होती है। यह बुद्धि को जलाकर राख कर देती है। मनुष्य अपना बुरा भला नहीं सोच सकता और भूल भ्रम में पड़ कर अनुचित कर्म कर बैठता है जिसके लिए उसको पछताना पड़ता है। वह उल्टे पांव लौट आया। उसने सोचा—'अधिक प्रमाण की क्या आवश्यकता है! मैंने रानी के मुख से उसके घृणित कर्म को सुन लिया। अब पूछना गछना व्यर्थ है। इससे मेरी और भी बदनामी होगी।' दिन भर वह इसी सोच विचार में पढ़ा रहा। रात हुई। उसने एक चण्डाल (जल्लाद) को बुला कर हुक्म दिया 'रानी को ले जाकर उसके दोनों हाथों को काट दो और जंगल में छोड़ आओ। कटे हुए हाथ मेरे पास अवश्य लाना।'

रानी सो रही थी। उसे मूर्च्छित करने की दवा सुँघा दी गई। जल्लाद (चण्डाल) उठाकर उसको जंगल में ले गया। ठण्डी ठण्डी वायु के लगने से रानी की मूर्छा जाती रही। उसने अपने आपको राज भवन से बाहिर पाकर चण्डाल से पूछा, "मैं यहाँ कैसे आई?" उसने कहा, "मैं नहीं जानता। मुझे राजा ने हुक्म दिया है कि आप के दोनों हाथ काटकर उसके पास ले जाऊँ और आपको इसी भयानक जंगल में छोड़ दूँ।"

रानी सोचने लगी—"मैंने कौन सा अपराध किया है। जिसके लिये ऐसा हुक्म दिया गया है" परन्तु कोई बात समझ में नहीं आई। उसने चण्डाल से कहा, "बहुत अच्छा! राजा का हुक्म सर और आखों पर! तुम मेरे हाथ काट लो। यह शरीर उसी का है और उसी के नाम पर अर्पण है। यदि वह इसी में प्रसन्न है तो मैं भी अपने आपको सौभाग्यवती समझती हूं।"

रानी के सुन्दर सलोने रूप को देखकर चण्डाल के मन में दया आई। उसने डबडबाई आंखों से कहा, "महारानी! मैं क्या करूँ! मेरा कोई वश नहीं! राजा का हुक्म ऐसा ही है। क्या करूँ! क्या न करूँ। कुछ समझ

में नहीं आता।" रानी बोली, "तुम राजा के सेवक हो। अपना काम करो और चले जाओ। मुझ को यहीं छोड़ दो। जो मेरे कर्म में लिखा है वह अवश्य होकर रहेगा। इससे कोई बचा नहीं सकता। ब्रह्मा ने जो ललाट में लिख दिया है वह भी उसको नहीं मेंट सकता। मनुष्य की तो शक्ति ही क्या है! कर्म भोग सबके लिये आवश्यक है।

* दोहा *

कर्म भोग भुगतै बनै यह जानै सब कोय।
ज्ञानी भुगतै ज्ञान से, मूरख भुगतै रोय॥"

रानी की बातें सुनकर चण्डाल का कलेजा फटने लगा। उसकी आंखों से टप टप आंसू गिरने लगे। उसने इधर-उधर देखा। संयोग वश पास ही किसी सौदागर की लड़की मरी पड़ी थी। वह कैसे मरी या मारी गई इसका उसे पता नहीं था। चण्डाल ने हाथ बांधकर कहा, "माता! मैं इसके हाथों को काट ले जाता हूँ। तू अपनी अँगूठी और कङ्गन इनमें डाल दे जिससे राजा को विश्वास हो जाये और वह मुझ पर क्रोध न करे। मैं तुझको यहां छोड़ जाता हूँ। मेरी सम्मति है कि तू भाग कर अपनी जान बचा ले।" रानी हँसी। इसमें उसने अपने अगले अच्छे कर्मों के अच्छे फल देखे। बोली, बहुत अच्छा! ऐसा ही करो।" और ऐसा ही किया गया।

जब कटे हुये हाथ राजा के पास पहुँचे उसे बड़ा ही दुःख हुआ वह अपनी भूल पर पश्चाताप करने लगा परन्तु होने वाली बात हो चुकी थी। उसने समझा अब रानी को जंगल के सिंह और चीते खा जायेंगे या खा गये होंगे। बिना हाथ का मनुष्य अपनी रक्षा नहीं कर सकता। वह अपने मन से रानी के ध्यान को भुलाने लगा परन्तु कहना सहज और करना कठिन है। उसके अपार दुःख का वर्णन नहीं हो सकता।

—(७)—

रानी का पाँव भारी था। वह घने जंगल में चली गई। रात ज्यों-त्यों

कटी । प्रातःकाल उसके गर्भ से पुत्र उत्पन्न हुआ और रोने लगा । रानी ने उसकी ओर देखकर कहा, "बेटा ! एक ही दिन की बात थी । कहीं तेरा जन्म कल बाप के घर में हुआ होता तो धूमधाम के साथ सारे राज में उत्सव मनाया जाता । तूने आज जन्म लिया और देख ! पालने की जगह तुझको पृथ्वी में जगह मिली है । कोई सेवा करने के लिये भी पास नहीं है । तेरा रोना उचित है परन्तु इस रोने धोने से होता क्या है ? जो भाग्य में लिखा था वह आगे आया । तू भी धैर्य धर ! मैं भी धैर्य धरती हूँ ।"

रानी इस प्रकार बात कर रही थी मानो नन्हा बालक उसकी बातचीत को समझ रहा था । रानी और जंगल ! जंगल में बच्चे का जन्म होना ! जहाँ न कोई सेवक न सहायक ! न खाने पीने की सामग्री ! कैसे दुख भरी कहानी है ! सोचने ही से रोंगटे खड़े होते हैं । मालिक ऐसा दिन शत्रु को भी न दिखाये । बच्चे का जन्म पव फटते ही हुआ थां । रानी ने उसको दूध पिलाया और वृक्ष के नीचे पृथ्वी पर लिटा दिया । वह इस सोच में पड़ी कि यदि कहीं से फूस मिल जाये तो वह उसके लिये अच्छी सी जगह बना दे । दोपहर तक वह इसी काम रही । कभी बच्चे को देखतीं, कभी अपनी ओर दृष्टि करती । कभी हँसती और कभी रो देती । बृक्ष के गिरे हुये सड़े गले फल जो मिले उनको खा लिया और वृक्ष ही के नीचे फूस के बिछौने पर बच्चे के सावे लेट रही ।

अभी बहुत देर नहीं हुई थी कि उधर एक यती (जैनी साधू) आ निकला । उसने वृक्ष के नीचे एक युवती को बच्चे के साथ लेटी हुई देखकर पूछा, "माई ! तू कौन है ?" रानी की आंख खुल गई । उसने कहा, "मैं ।" साधू बोला, "तू किसी बड़े घर की स्त्री जान पड़ती है । यहाँ अकेली जंगल में कैसे आई ? और कोई साथ भी है जो कहीं दाना पानी की खोज में गया है ? या तू एकदम अकेली है ?" रानी की दशा कुछ न पूछो । रो रो कर सब खुछ कह सुनाया । साधू ने पूछा, "अब यहां तेरी रक्षा कौन करेगा ?" महात्मन् ! मेरी रक्षा महावीर करेंगे ।" साधू ने फिर पूछा, "महावीर कौन

है ?" क्योंकि उसने महावीर किसी साधारण मनुष्य को समझा था। रानी बोली—महावीर धर्म है। महावीर सभ्यता है. महाबीर शील क्षमा और दया है। महाबीर ने पांच तत्त्वों के बने हुये शरीर को त्याग दिया परन्तु उसने धर्म, शील क्षमा, दया और तप को अपना शरीर बना रक्खा है। वही मनुष्य मात्र का आदर्श है।" साधू को आश्चर्य हुआ। वह समझ गया कि यह कोई साधारण स्त्री नहीं है किन्तु ज्ञानी है। उसको ढारस दी और कहा, "बहिन ! इस वन में मेरा आश्रम (विहार) है और उसका नाम भी महाबीर बिहार है। जब इस नाम पर तुझको इतनी श्रद्धा है तो वहां चल कर रह। हम सब तेरी सेवा और सहायता करेंगे और जब तक तेरे अच्छे दिन आयेंगे वहां तू कुछ दिनों शान्ति से रह सकेगी।"

रानी उस विहार में आई और भिक्षुनी के समान जीवन व्यतीत करने लगी।

—०(८)०—

कई महीने बीत गये। एक दिन राजा के मन में आया कि रानी के कपड़े लत्ते और भूषण वस्त्र दीन दुखियों को बाँट दिये जायें। उसने उसके कपड़ों के सन्दूक को खोला। दोनों साड़ियों को जो रानी के सर पर बला लाई थीं भोज पत्रों में लपेट कर रक्खी हुई थीं और उस पर लिखा हुआ था—'यह मेरे प्यारे ने भेजा है जिसको मैं बड़े प्रेम और आदर से रक्खूँगी।' इन शब्दों को पढ़ना था कि उसके हृदय में और भी आग लग गई। बण्डल को खोला, दोनों साड़ियां गिर पड़ी। उन पर जगह-जगह बेल बूटों के रूप में 'जयसेन' का नाम लिखा हुआ था 'काटो तो लुहू नहीं बदन में।' ईर्षा की जगह उसी समय दुख और सोच ने ले ली। आंखों से आंसू गिर पड़े, ऐ निर्दोष और निरपराध रानी ! मैंने केवल भ्रम और झूठे सन्देह में पढ़कर तेरी जान ली मैं पापी हूँ। मुझको धिक्कार है ! यह पाप करके मैं जीता कैसे हूँ ! मैं पाप की आग से जलकर भस्म क्यों न हो गया ! मुझ पर महल की छत क्यों गिर पड़ी।" रोते रोते हिचकियां लग गईं और वह मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा जब चेत आया फिर वैसे ही रोने

और विलाप करने लगा। अन्त में उसने यह प्रतिज्ञा की कि जैसे मैंने रानी को दुख देकर मारा है मुझको भी वैसे ही मरना चाहिये। यह सोच विचार कर उसने जंगल में जाकर मरने की ठहरा ली। सबको दुख हुआ। अब तक किसी को पता नहीं था कि रानी क्या हुई और कहां गई क्योंकि राजा ने चण्डाल को ताकीद के साथ समझा दिया था कि यह भेद किसी पर खुलने न पाये। अब सब जान गये कि केवल झूठे भ्रम में पड़कर राजा ने उस बेचारी दुखिया के हाथ कटवा कर जंगल में छुड़वा दिया था। सबको महा दुख हुआ क्योंकि जब से वह आई थी शङ्खनगर की अवस्था एकदम बदल गई थी। देश आनन्द और प्रजा सुखी थी। सारी प्रजा धर्मात्मा बन गई थी। रानी का नाम धर्म्म का प्रबोधक बन गया था। ऐसा रोना पीटना मच गया जिसका कुछ ठिकाना नहीं।

जब सबको पता लग गया कि राजा अब बन को चला जायेगा तब मन्त्री और दरबारियों ने आकर समझाया कि इस विचार को चित् से दूर कीजिये परन्तु वह ऐसे समय में किसकी सुनता था! सब चुप हो गये। दत्त की बात को वह ध्यान से सुनता था परन्तु वह अन्य देश में था लाचार उसके बाप गजश्रेष्ठ को बुला भेजा। उसने आकर राजा से कहा, "महाराज! एकबार आपने बिना विचार हुये काम किया उसका परिणाम यह दुख हुआ। अब दूसरी बार फिर आप बिचारे बिना काम कर रहे हैं। देखिये! ऐसा न हो कि आपको और भी अधिक पछताना पड़े।" यह शब्द कुछ इस प्रकार से कहे गये थे कि राजा चौकन्ना हो गया। बोला, "फिर तुम बताओ अब क्या करूँ?" उसने कहा, "आप जिनेश्वर भगवान महाबीर स्वामी की पूजा किया करें। मैं एक प्रसिद्ध यति अमित तेज को बुला लाता हूँ। वह नगर से बाहर बन में रहता है। वह आपको नित्य उपदेश सुनायेगा। सम्भव है आपका चित् ठिकाने आ जाये।"

राजा ने इस बात को मान लिया।

—०(६)०—

अगले दिन राजा को यह उपदेश दिया,

।। मनुष्य बनो ।।

"महाराज ? यह संसार कर्मक्षेत्र है। मन वचन और कर्म से जो काम किया जाता है मनुष्य उसी का फल पाता हैं। हमारे जीवन का आधार हमारा कर्म है। इस कर्म का खेल मन है। शुभ या अशुभ विचार बीज हैं। बचन और बानी विलास उसके फूले हैं और कर्म वह कच्ची कलियां हैं जो फूलों में छुपी रहती हैं और जब यह खिलती हैं फल प्राप्त होता है। फल वही है जिसको हम इस जीवन में नित्य भोगते हैं। हमने जैसा किया वैसा फल पाया और उसी के अनुसार हमारा जन्म हुआ। अच्छे कर्म करने से अच्छा जन्म और बुरे कर्म करने से बुरा जन्म मिलता है। कोई यह कभी न कहे कि दुख और सुख को किसी और ने जन्म दिया है। नहीं ! कदापि नहीं ! यह हमारे कर्म्मों के फलहैं। यह कर्म तीन प्रकार के होते हैं। प्रारब्ध, क्रियमान और सञ्चित। प्रारब्ध तो वर्तमान दशा में फल दे रहे हैं। क्रियमान किये जा रहे है जिनमें से कोई कोई सञ्चित होगा। कोई कोई अगले जन्म में प्रारब्ध भी बनेगा और कोई इसी जन्म में फल देता है। सञ्चित वह हैं जो इकट्ठा हो रहे है। अभी फल नहीं देते आगे चलकर किसी न किसी जन्म में यह विकास पायेंगे।"

राजन् ! यह कर्म प्रबल है। तुमने इस जन्म में किसी से दुख पाया। सम्भव है कि तुमने उस जन्म में उसको दुख दिया हो और वह अपना बदला ले रहा हो। तुमसे किसी ने इस जन्म में दुख पाया। सम्भव है कि उसने अगले जन्म में तुमको दुख दिया और अब तुम उसको दुख दे रहे हो। कर्म कथा को कोई कैसे किसी को सुनावे ! उसके अनेक रूप हैं। इसीलिये जिनेश्वर भगवान की आज्ञा है कि "अहिंसा परमो धर्मः।" किसी को मन वचन और कर्म से कभी न सताओ। शील, क्षमा और दया का व्रत पालन करो। यदि किसी ने तुम्हारा अकाज भी किया हो तो उसको क्षमा करो। अपना मन न बिगाड़ो। मन और इन्द्रियों को वश में रक्खो जिससे अशुभ कर्म फिर न होने पावें और शुभ कर्म करने से सुन्दर शरीर, सुन्दर कुल, सुन्दर देश और सुन्दर सामग्री मिलती हैं। मनुष्य इनको पाकर और इनको पाकर और इनके साथ उचित व्यवहार और वर्त्ताव करके अपनी और हमारी

की भलाई करता है और अन्त में वह उसी प्रकार की भलाई करता हुआ, दया धर्म पालता हुआ और अहिंसा का व्रत धारण करता हुआ कड़ी पदवी को प्राप्त होता है जो ऋषि मुनि और ज्ञानियो का आदर्श है।"

"राजन् ! तुमने अपनी रानी को ईर्षा के कारण दुख दिया तुमको सोचना चाहिए कि यह दुख क्यों हुआ। इसका बीज तुम्हारे मन में उत्पन्न हुआ। तुमने उसको दुख दिया। अब वह दुख लौट कर तुमको लगा और तुम पश्चाताप कर रहे हो। हों सके तो अब उस बीज को जला कर भस्म कर दो। उसमें अंकुर न आने पावे और न फल फूल उत्पन्न हो सकें। विचार से काम लेना सीखो। तब ही तुम्हारा कल्याण होगा।"

इस उपदेश से राजा को ढारस हुई और जंगल जाने के विचार को छोड़ कर अपना काम काज करने लगा परन्तु फिर भी रानी का ध्यान, उसको दुखी करता रहा। यती नित्य आता और उपदेश कर जाता। नित्य के उपदेश से राजा को तसल्ली मिलती परन्तु रानी का ध्यान चित् से न गया पर न गया।

—×(१०)×—

एक दिन राजा ने मुनि से कहा, "भगवन् ! मैंने आज, रात को एक स्वप्न देखा। आप उसका फल बताइये।" मुनि ने पूछा, "वह स्वप्न क्या है ?" उसने उत्तर दिया, "कल्प वृक्ष की एक डाली नीचे की ओर लटकी हुई है। मेरी इच्छा पर वह मेरी ओर झुक जाती है और उस डाली में एक बहुत सुन्दर फल लगा हुआ है।" मुनि बोला, "सुन राजा इस स्वप्न से पता लगता है कि तेरी रानी अभी तक जीती है और उसके गर्भ से पुत्र उत्पन्न हुआ है जो किसी न किसी दिन तुझको मिलेगा। मेरी समझ में आता है कि तू किसी को बन में भेजकर रानी की खोज करा। आशा तो है कि वह मिल जायेगीं।"

राजा मन में बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसका दुख हर्ष के साथ कुछ-कुछ बदलने लगा। इतने में दत्त के सफर से आने की सूचना मिली, राजा ने यह सुनकर उसको बुला भेजा और जब वह आया अपनी भूल और अत्या-

चार की कहानी कह सुनाई। दत्त ने बहुत ही शोक प्रकट किया, "शोक है राजन्! कलावती स्त्री नहीं रत्न थी। मैंने तुमको पहिले ही बताया था। अब खोकर व्यर्थ पछताते हो। उसके हाथ तक कटवा डाले अब यदि वह मिली भी तो लज्जा वश किसी के सामने कैसे होगी।" राजा ने कहा, "मैं अपने हाथों उसकी सेवा करूँगा। किसी बांदी या दासी को उसका काम न करने दूँगा। ऐ दत्त! यदि तुझसे हो सके तो एक बार रानी को लाकर मुझे दिखा दे। मैं उससे "क्षमा के लिये प्रार्थना करूँगा।" दत्त ने उत्तर दिया, "क्षमा माँगना सहल हैं परन्तु हाथ आना कठिन है। मैं जाता हूँ, ढूँढूगा। वह मिल गई तो साथ लाऊँगा और यदि न मिली तो दुर्भाग्य! इसके अतिरिक्त और क्या कहा जाये।"

यह कहकर दत्त ने चण्डाल को बुलाया। उससे जंगल का पता लिया और उसी पते पर चल निकला। कई दिन ढूँढ़ने में लग गये परन्तु पता नहीं लगा। अन्त में वह घबरा गया और उदास होकर नगर की ओर लौटने ही को था कि एक यती गेरुआ कपड़े पहिने हुये दिखाई दिया।

दत्त—"महाराज! इस जंगल में कोई दो पथिक भूल गये आप कुछ उनका पता दे सकते हैं?"

यती—"कौन पथिक? यहाँ सब ही पथिक आते हैं। जंगल में रहता कौन है?"

दत्त—"आप तो रहते हैं। और लोग पथिक ही सही।"

यती—"तुम स्पष्ट कहो क्या पूछते हो?

दत्त—"एक दोनों हाथ कटी हुई सुन्दर युवती और उसका नन्हा बालक। इन दोनों को खोज रहा हूँ।

यती—"असम्भव है। जिसके हाथ नहीं वह बच्चे को सँभाल कैसे सकेगी?"

दत्त—"सच है! आप सत्य कहते हैं परन्तु मैं झूठ नहीं कहता।"

यती—"झूठ तो मैं भी नहीं कहता परन्तु यह बात कितने दिनों की है?"

दत्त—"कई महीने बीत चुके हैं।

यती—"हमने इस प्रकार की कोई स्त्री नहीं देखी परन्तु तुम हमारे विहार में चलो। जिनेश्वर के दर्शन करो। उसके प्रताप से सम्भव है कि तुमको कुछ पता लग जाये। वहां कई साधू रहते हैं। यदि किसी ने देखा है तो वह बता देगा।

—×(११)×—

दत्त—विहार में साधू के साथ आया। विहार क्या था? एक बड़ा बाग था जिसके भीतर बहुत से घर बने हुये थे। पक्षी गण वृक्षों पर आनन्द से चहचहा रहे थे। पशु इत्यादि अभय होकर घास चर रहे थे। वह जानते थे कि यहां कोई छेड़छाड़ न करेगा। वह विहार के मनुष्यों से इतने हिले मिले थे मानो उस पवित्र स्थान के समस्त मनुष्य और पशु एक ही कुटुम्ब और एक ही परिवार के लोग हैं। यह विहार भिक्षुओं का था। उसके एक कोने में एक अकेली स्त्री अपने बच्चे के साथ रहती थी और वह भी यहाँ प्रसन्न थी क्योंकि यहां से संसार का दुख कोसों दूर रहा करता था। साधुओं के पवित्र संस्कारों ने अपना मण्डल बांध रक्खा था। जो आता था उस पर उसका गहरा प्रभाव पड़ता था दत्त को भी वह जगह बहुत अच्छी लगी। यती ने स्त्री का रूप रंग बताकर साधुओं से पूछा कि आया इस प्रकार की स्त्री किसी ने जंगल में देखी है! और तो सब चुप हो गये परन्तु एक साधू ने कहा, "हां! मैंने देखी है। तुम अपना प्रयोजन कहो तब मैं जो उचित समझूँगा तुम्हें उत्तर दूँगा।"

दत्त—"उसका पति महा दुखी है।"

साधू—"उसका दुख किस प्रकार का है?"

दत्त—"उसने निर्पराध उस स्त्री के हाथ कटवा कर जंगल में छोड़ दिया था। अब उसको निश्चय हो गया कि वह एक दम निर्दोष थी। इसलिये वह बहुत पश्चाताप करता है।"

साधू—'यदि स्त्री मिल जाये तो फिर तो वह किसी और को दण्ड न देगा ?"

दत्त—नहीं, परन्तु क्या उसके हाथ सचमुच कटे हैं ?"

साधू—"हाँ ! यदि तुम समझे लो कि हाथ कटने का अभिप्राय यह भी है कि मनुष्य विवश और बिना आश्रय के हो जाये।"

दत्त—"आप मुझको दिखा दीजिये और उसका पता दीजिये। मैं जाकर मिलूँ। उस समय मैं समझ जाऊँगा कि आया वह वही स्त्री है जिसे मैं ढूँढ़ रहा हूँ या दूसरी है।"

दोनों कलावती के पास आये। कलावती बच्चे को गोद में लिये लोरियां गा रही थी। दत्त को देखते ही उसकी आंखों से आंसू निकल पड़े। दत्त भी रोने लगा ! रानी ने कोई बात नहीं कहीं। दत्त ने सारी कथा राजा के दुख की कह सुनाई। रानी के सर पर दुख का पहाड़ टूट पड़ा। वह कहने लगी, "हाय ! मैं जीती हूँ और मेरा पति इस प्रकार दुख सहे ! मैं अभी नगर चलने को तैयार हूँ यदि यह यती मुझे आज्ञा दें। यती ने हँसकर कहा, "हां आज्ञा एक शर्त पर मिल सकती है।" दत्त ने पूछा, "वह क्या है ?" साधू ने उत्तर दिया, "कलावती ने यहां पत्थर की अपनी हथकटी मूर्ति बनाई है और उस ऐसा रंग दिया है कि कोई मनुष्य यह नहीं कह सकता कि वह पत्थर की मूर्ति है या कलावती है। तुम राजा को ढारस देकर पहिले इस मूर्ति को दिखा दो, फिर कलावती यहां से चली जायेगी।

दत्त—ने यह बात मान ली।

—×(१२)×—

दत्त—ने आकर राजा से कहा, "कलावती अपने बच्चे के साथ जीवित है परन्तु वह जिस जगह विहार में है वहां के यती कहते हैं—कि राजा ने जिस प्रकार देश से निकाला वैसे ही उसको स्वयं आकर ले जाये। हम इस अबला और नन्हे बालक को उसी के हाथ सौंप देंगे। कौन जाने कोई कैसा हो ! और आवश्यकता भी इसी बात की है कि आप रानी और राजकुमार

को स्वयं ले आवें।" राजा ने इसे स्वीकार कर लिया और मन्त्री दरबारी सब को साथ लेकर विहार में आया। उसने साधुओं को बहुत कुछ भेंट दिये। जिनेश्वर का दर्शन किया। साधुओं ने आशीर्वाद दिये।

तत्पश्चात् राजा को उस कोठरी में ले गये जहां कलावती की मूर्ति चुपचाप खड़ी थी और साथ ही एक पलँगड़ी पर नन्हे बालक की मूर्ति लेटी हुई अपना अँगूठा चूस रही थी। राजा ने ध्यान के साथ उन अचल मुर्तियों को देखा। उसके मन में अनेक प्रकार के विचार उत्पन्न हुये। मन के भाव को न रोक सका। वह मूर्त्ति के पांव पर गिरना ही चाहता था क्योंकि उसने उसको अपनी जीती जागती रानी समझा था परन्तु ज्यों ही वह उधर झुका एक स्त्री ने झपट कर उसका हाथ पकड़ लिया, 'प्राण नाथ! अभागी कलावती यह है। वह तो मूर्त्ति है।' स्त्री पुरुष दोनों गले मिले। साधू और दत्त उसी समय बाहर निकल आये। राजा ने रो रो कर अपने अपराध की क्षमा मांगी आगे के लिये उसकी प्रसन्नता पर रहने और चलने का शपथ किया। रानी ने अपने आंचल से उसके आंसू पोंछे और कर्म की गति को प्रवल बताकर उसे ढारस दी। राजा ने फिर नन्हे बच्चे को गोद में उठा लिया। बच्चा उसे अजनबी समझ कर रोने लगा। राजा ने कहा, 'बच्चा इसलिए रोता है कि वह पापी की गोद में आया है।' रानी बोली, नहीं महाराज! यह आनन्द का रोना है। बच्चा समझता है कि अब उसका सच्चा अन्नदाता मिल गया।'

स्त्री पुरुष का मिलाप हुआ। उनकी आंखों से आंसुओं की धारा वह रही थीं। इस आनन्द के अवसर पर दुख की कहानी क्यों कही जाये। वह जो होने को था हो गया। राजा ने उसके हाथों को ठीक देखकर पूछा, 'हाथ कैसे लग गए?' उसने दिया, 'जिनेश्वर की कृपा।' फिर किसी ने इस विषय में अधिक बातचीत नहीं की। साधू की आज्ञा लेकर वह अपने घर लौट आये। जैसे उनके दिन फिरे ईश्वर करे सबके दिन फिरें।

—o—

हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर

प्रवचन

दिनांक ८ जून १९७७

मेरे दाता दीन दयाल ॥

तू करुणा मय जगत आधारा, तू सब का है प्रतिपाला ।
तू स्वामी हम सेवक तेरे, नही है अब कोई रखवारा ॥
तू दुख भजन जन मन रंजन, काट भरम यह जंजाला ।
मात पिता तू हित सम्बन्धी, मैं तेरा बाल गोपाला ॥
तू अथाह सागर है स्वामी, जीव नदी है और नाला ।
अन्धकार में बहु दुख पाया, करदे आज उजाला ॥
तूने पाला तूने पोसा, छिन छिन तूने सँभाला ।
दीन बन्धु रक्षा कर मेरी, पड़ा है करमन है पाला ॥
ना बल पौरुष ना मेरे बुद्धि, कठिन है काल कराला ।
बल दे करूँ भक्ति तेरी निर्शादन, करूँ नाम की माला ॥
तीन ताप मोह अधिक सतावे, नाम से करदे सुखाला ।
कैसे दरस परस करूँ तेरा, हिये में लगा है ताला ॥
दे दे दे अब देर न कर तू, अमृत नाम रसाला ।
आपको बिसरूँ जग को भुलाऊँ, पीलू प्रेम पियाला ॥
मांगू मान न मांगू सम्पत, चाहूँ न घोड़ न घुड़शाला ।
राधास्वामी समरथ सतगुरु दाता, करदे मोहि निहाला ॥

राधास्वामी । देखो ताराचन्द ! तुम आये हो । यह बाणी सुनो । नाम के पीछे मैं भी चल रहा हूँ । इस नाम का पता मुझे दिया तो हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मगर मैं इस नाम को ऐ ताराचन्द ! आप लोगों की बदौलत समझा । मुझे नाम का पता तो लग गया मगर अभी तक मुझसे उस अवस्था में ठहरा नहीं जाता । वह नाम क्या है जहाँ हमने ठहरना है ? आप

बीत गई इस नाम को तलाश करते करते मगर नाम का पता मुझे आप जैसे महापुरुषों की बदौलत लगा। अब नाम की ओर चलता रहता हूँ मगर इस नाम में हर समय मैं ठहर नहीं सकता। शायद यह मेरे प्रालब्ध कर्मों के कारण होगा।

दे दे दे अब देर न कर तू अमृत नाम रसाला।
आपको विसरूँ जग को भुलाऊँ, पी लें प्रेम पियाला ।।

यह है असली नाम हम अपने आपको और संसार को भूल जाते हैं और यही राधास्वामीमत कहता है—

सुरत हुई अतिकर मगनानी, पुरुष अनामी जाये समानी।

सन्तों का मार्ग यह है कि मरने से पहले मर जाओ। यह है आखरी (अन्तिम) नाम। बाकी जो नीचे के नाम है सहसदलकमल, त्रिकुटि, सुन-महासुन और भँवर गुफा इनमें आदमी अपने आपको भूलता नहीं। इसलिए न घण्टा शंख नाम है न ओंकार नाम है न सोहंकार नाम है और न ही सत्याकार असली नाम है। यह तो सत जानते हैं कि सह सराकार ओंकार, रारकार, सोहंकार और सत्यकार को जवान से रटना असली नाम नहीं है लेकिन अपने अन्तर में घण्टा शंख सुनना, बादल की गरज सुनना रारंग सारंग या मुरली सुनना भी असली निजनाम नहीं है। हां! निज नाम तक पहुँचने के लिए ये मार्ग में आते हैं।

दाता! मौज या मेरे कर्म मुझे आपके चरणों में ले गये थे। आपने आज्ञा दी थी कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। क्या शिक्षा बदलूँ? जो मेरा अपना अनुभव है वह कहता हूँ। पता नहीं ठीक है या गलत है।

दे दे दे अब देर न कर तू अमृत नाम रसाला।
आपको विसरूँ जग को भुलाऊँ, पी लूँ प्रेम पियाला ।।

यह तो है हजूर दातादयाल जी महाराज का शब्द। यही राधास्वामी मत कहता है—

सुरत हुई अतिकर मगनानी ।
पुरुष अनामी जाये समानी ॥

अनामी में समा जाने का भी तात्पर्य (अर्थ) है। बारह मासा के जेठ महीने में स्वामी जी महाराज ने भी यही कहा है कि उस अवस्था में चले जाने से वहां न खालिक है न गुरु है और न चेला है और न राम है और न रहीम है,वहां न जात का पता है और न सिफात का। वहां न दुख है और न सुख है न चिन्ता है और न फिकर है नाम की प्राप्ती, वह एक विशेष अवस्था है। मगर सत्संगी आपस में लड़ाई झगड़े करते हैं कोई कहता हैं कि राम राम नाम है कोई कहता है कि अल्ला नाम है कोई कहता है कि पांच नाम नाम है कोई कहता है कि राधास्वामी नाम है। जिस नाम से या जिस विचार से तुम अपने आपको भूल नहीं सकते वह नाम नहीं है। बस एक ही फैंसला। भूलना केवल शरीर और मन को ही नहीं है बल्कि अपनी हमनी हस्ती के बोध को भी भूलना है शेष जो कुछ अन्तर में अनमयकोश, मनुमयकोश, प्राणमयकोश, विज्ञानमयकोश और आनन्दमयकोश या सहसराकार, ओंकार रारंगकार और सोहंकार ये हमारी अपनी चेतन्ता की अवस्थायें हैं जिसमें हम खुशी, आनन्द और रिद्धि सिद्धि लेते हैं मगर अपने आपको भूलते नहीं और न ही इन स्थानों पर शान्ति मिलती है यद्यपि ज्ञान प्राप्त होता हैं। इन स्थानों पर असली नाम नहीं मिलता। यहां दुख के बाद सुख और सुख के बाद दुख भी आयेगा, बीमारी भी आयेगी, कभी मान होगा और कभी अपमान। यह संसार का व्यवहार है।

ताराचन्द ! तुम आये हो और मुझे गुरु मानते हो मगर आप लोग मेरे गुरु सिद्ध हुये जिनसे मुझे यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता। मैं जब अपने अन्तर राम को या हजूर दातादयाल जी महाराज देखता था तो मैं भी उनको भूलता नहीं था। अब मुझे मंजल का पता तो लग गया मगर हर समय वहां ठहरा नहीं जाता, यह मेरे वस की बात नहीं है। मैं वहां से वापिस आना नहीं चाहता मगर कोई वहाँ से धकेलकर मुझे

वापिस ले आती है। क्यों ले आ मैं है ? पता नहीं। मेरे कर्म या मौज मालिक। असली नाम तो मैंने आपको बता दिया। मगर इस नाम की इच्छा किसी को नही है। संसार तो खुशी, आनन्द और सिद्धि शक्ति चाहता है। इसके लिए साधन और अभ्यास करो। हर एक जीव की प्रकृति जुदा है इसलिए जैसा कोई है उसकी प्रकृति अनुसार उसको हिदायत करो और उसके जीवन को अच्छा बना दो और उसको मंजल पर पहुँचा दो। लोग बाणी पढ़कर पागल हो गये। असली नाम क्या है जहां हमने अपने आपको गुम करना है ?

दे दे दे अब देर न कर तू अमृत नाम रसाला।
आपको बिसरूँ जग को भुलाऊँ पी लूँ प्रेम पियाला ॥

यह है नाम। हमने इस अवस्था में जाना है यही हमारा आद है और यही हमारा अन्त है। जो कुछ स्वामी जी ने इस अवस्था के बारे कहा है वह भी मैंने आपको बता दिया है। इस शब्द में आया है कि "आप को बिसरूँ जग को भुलाऊँ।" एक बाहर का जगत है वह तो सुमिरन से ही भूल जाता है। एक हमारे अन्तर का जगत है अर्थात हमारे अन्तर के जो तीन शरीर है हमने उनके खेल को भुलाना है। उस अखिरी अवस्था को जहाँ हमने जाना है कबीर साहिब ने इस प्रकार वर्णन किया है।

सखिया वा घर सबसे न्यारा, जहँ पूरन पुरुष हमारा ॥
जहँ नहिं सुख दुख साच झुठ नहिं, पाप न पुन्न पसारा।
नहिं दिन रैन चन्द नहिं सूरज, दिवा जोति उजियारा ॥
नहिं तहँ ज्ञान ध्यान नहिं जप तप, वेद कितवे न बानी।
करनी धरनी रहनी गहनी, ये सब जहां हिरानी ॥
धर नहिं अधर न बाहर भीतर, पिंड ब्रह्मण्ड कुछ नाहीं।
पाँच तत्व गुन तीन नहीं तहाँ साखी शब्द न ताहीं ॥
मूल न फूल बेलि नहिं बीजा, बिना वृच्छ फल सोहै।
ओअ सोहं अर्ध उर्ध नहिं, स्वासा लेख न कोहै ॥

नहिं निर्गुन नहिं सर्गुन भाई, नहिं सूच्छम अस्थूल ।
नहिं अच्छर नहिं आविगत भाई, ये सब जग के भूल ।।
जहां पुरुष तहवा कछु नाहीं, कहै कबीर हम जाना ।
हमरी सैन लखै जो कोई, पावै पद निरवाना ।।

यह है असली बात । अब मैं अपने जीवन का एक अनुभव बताता हूँ जिसको हजूर दातादयाल जी महाराज ने अपने रसाला सन्त में पुष्टि की थी। वह यह है कि एक ही स्टेज पर सारे दर्जे खुल जाते है मैं और अन्तिम अवस्था आ जाती है। अन्तिम अवस्था क्या है ? अपने आपको और संसार को भूल जाना या सुख का अनामी पद में जाकर मगन होके गुम हो जाना जिसको मुसलमान सूफी इस प्रकार वर्णन करते हैं—

तू दरदो गुम शिव विपाल हूँ अस्तो वस ।
तू मुवाश असला कमाल हूँ अस्तो वस ।।

ये निचले दर्जों के बोधमान या दृश्य हैं या उनकी चेतनतायें हैं। ये प्रकृतिक हैं। क्योंकि हर एक आदमी की प्रकृति एक दूसरे से नहीं मिलती। इसलिए सबके भीतरी दर्जे भी एक जैसे नहीं खुलते।

बाकी रह गया संसार ! संसार में खुश रहो। किसी की सहायता करो चिन्ता फिकर मत करो। जो कुछ कर्म में है वह अवश्य मिलेगा। जिसने लेना है वह ले लेगा और जिसने देना है वह भी अवश्य देगा। सबने अपने २ कर्म का भोग भोगना है।

अब मानव किसी पूर्ण पुरुष के अधीन इन Stages में से होता हुआ उस अवस्था में पहुँच जाता है जिसका वर्णन हजूर दातादयाल जी महाराज ने अपने शब्द में किया है या कबीर साहिब या स्वामी जी महाराज ने वर्णन किया है तो उसके बाद आदमी के अन्तर एक और दशा अवस्था पैदा होती जिसमें मैं अब रहने का यत्न करता रहता हूँ। २४ घण्टे तो मैं अनामीधाम में नहीं रह सकता और न ही मैंने कोई और संत ऐसा देखा है जो हर दशा में अनामीधाम में रहता हो। हजूर दातादयाल जी महाराज जब किताबें

लिखते थे तो क्या अनामीधाम में बैठकर लिखते ये ? सन्तों ने चेले बनाये, सत्संगी बनाये और उनसे बातचीत करते थे क्या अनामीधाम में बैठकर करते थे ? सन्तों ने डेरे बनाये क्या अनामीधाम में बैठकर बनाये ? इसके बाद यह ज्ञान हो जाता है कि मैं कौन हूँ मेरा आद क्या है और अन्त क्या है। अनुभव ने सिद्ध कर दिया है कि हमारा आद वह अवस्था है जहां हमारी हस्ती अर्थात हमारे है पने का बोध समाप्त हो जाता है। तो मुझे क्या ज्ञान हुआ कि वह एक तत्व है। उसमें हलोर उठती है रचना बन जाती है जीव जन्तु सूर्य चांद सितारे सब बन जाते हैं और फिर जब उसकी मौज होती है तो उसमें समा जाते हैं। इस अनुभव के परक हो जाने के बाद फिर जब तक मानव मालिक की मौज से जीवन में है वह शारीरिक मानसिक और आत्मिक बोध मानो में खेलता हुआ उसमें फँसता नहीं। उस अवस्था का नाम है जीवनमुक्त अवस्था या विदेहगति। यही अन्तिम अवस्था है। यही सन्त कहते हैं और यही सब धर्मो की अन्तिम अवस्था है।

मैं सन्त ताराचन्द को कुछ कहना चाहता हूँ कि सन्तमत या बाकी सब धर्मो के साधनों का परिणाम क्या है ? जीवनमुक्त अवस्था। मैं निर्भय होके कहना चाहता हूँ कि प्रकृति के पूर्ण भेद का न तो किसी सन्त को पता लगा और न ही कि ऋषि को। जितना जितना किसी को अनुभव हुआ उसने अपने शब्दों में उसको वर्णन कर दिया और किसी न किसी ढंग से जीवनमुक्त अवस्था प्राप्त कर ली और उसको शान्ति मिल गई मगर जो संसारी लोग हैं और जिनको शारीरिक, मानसिक और आत्मिक खुशी और आनन्द की आवश्यकता है उनके लिये निचले दर्जो में साधन करना आवश्यक है। पर-चक्रों का साधन या कर्म या योग के साधनों से शरीर स्वस्थ रहता है। सहसदलकमल में साधन करने वाले की अस्थूल पदार्थ की आवश्यकतायें पूरी होती है और होनी चाहिये। त्रिकुटि के अभ्यासी की समझ बूझ बढ़नी चाहिए और मिलना चाहिए। सुन्न में अभ्यास करने वाले को मस्ती मिलनी चाहिए महासुन के अभ्यासी को स्वयं मस्ती मिलनी चाहिए। भँवर गुफा में

॥ मनुष्य बनो ॥

के लिए यह काम मत करना। यही हुजूर दातादयाल जी महाराज ने एक शब्द में मेरे नाम लिखा था—

न अपना नाम रखना तुम न दुनियां में निशां रखया।
नहीं की जब गई आदत जवां पर तब न हां रखना ॥
मुकर होना अवज्ञ है और मुनकर होना है गलती।
न सिर में ऐसे सौदा का कभी तारे गिरां रखना ॥
न साहवे दिल न वे दिल बनने की तुमसे हवस आये।
न दिल देगा न दिल लेना न बहरे दल स्तान रखना ॥
अगर है तस्क कर दो तरक का तरक ये गुमान
मका जब छुट गया फिर क्यों खियाल लामको रखना ॥
खामोशी महनए दारद कि दर गुफतन नमी आमेद।
न सच्च और झूठ कहने के लिए मुंह में जवान रखना ॥

सब को राधास्वामी

॥ मनुष्य बनो ॥

अमृत वाणी

सम्पादकीय :

बड़े भाग पाइब सतसंगा । बिनहिं प्रयास होई भव भंगा ॥
तबहिं होइ सब संसय भंगा । जब बहु काल करिअ सतसंगा ॥

संसार में प्राणी, यश, धन, वैभव सम्भव है, सब कुछ प्राप्त करले मगर उसका यदि अन्तकरण पवित्र नहीं है तो यह समझ लो कि उसका सांसारिक वैभव व्यर्थ है । बिना अन्तकरण की पवित्रता के न तो विचार ही शुद्ध होंगे और न वह शान्ती का अधिकारी होगा । जैसी उसकी मन की गति होगी वैसी ही उसकी मती होगी और परिणाम में मिलेगी केवल निराशा । जिस समय मन निर्मल होगा तभी हमारे जीवन में भी विचारों की लहरें भी पवित्र होंगी और इसी से हमारा मन भी उत्तम कार्यों की ओर अग्रसर होगा । उत्तम विचारों व कार्यों से ही हम समाज की सच्ची सेवा भी कर सकते है । तभी जीवन की सर्वप्रिय उपलब्धी भी प्राप्त होती है । यह अवस्था कब मिलती है जब प्राणी मात्त परमपिता परमेश्वर के चरणों में बैठकर अपने आपको अर्पण कर देता है । यह मार्ग सन्त बताते हैं । इसीलिये जीवन में किसी सतपुरुष का साथ मिल जाये तो वह अत्यन्त भाग्यशाली प्राणी होता है । फिर उस सतपुरुष के बताये मार्ग पर चलने तथा उसके वचनों का पालन करने में जो मानसिक सुख मिलता है वह अकथनीय है ।

गुरु अपने सतसंग में सारा ज्ञान अपने भक्तों पर उडेलते है । और शुभ भावनाओं से सतसंगियों का कल्याण करने में नही चूकते हैं हमारा सारा भ्रम उनके वचनों से स्वतः ही दूर हो जाता है उनके स्पर्श मात्त से हमारा जीवन धन्य हो जाता है ।

ऐसी होती है गुरु कृपा इसका कोई अधिकारी तो बने ।

प्रभूदयाल

आवश्यक सूचना

—×—

मनुष्य बनो पत्रिका आपकी सेवा में पिछले २७ वर्षों से प्रकाशित हो रही है और आध्यात्मिक विचारों के लिये यह अपने प्रकार की अमूल्य पुस्तिका है। हम हर सम्भव कोशिश करते है कि इसमें अधिक से अधिक सामिग्री दे सकें जिससे हर प्राणी को अपनी इच्छानुसार खुराक मिल सके।

अभी तक यह पत्रिका कम से कम मूल्य पर पाठकों को उपलब्ध की जा रही है मगर मँहगाई के कारण इसको वर्तमान मूल्य पर चलाना असम्भव हो रहा है।

इसलिये अगले वर्ष से इसका मूल्य ६) प्रति वर्ष किया जा रहा है। यह मूल्य अक्टूबर १९७७ से लागू किया जायेगा।

भवदीय

व्यवस्थापक

...दयाल फकीरचन्द जी कृत हिन्दी पुस्तकें

...की जीवनी
३)५०
...काश भाग १
)७५
प्रकाश भाग २
१)
...प्र कृत)
...उर्फ जीवन रहस्य
१) ०
...भाग १ व २
५)
...रहस्य
१)७५
१)५०
...वक्त
३)
...भाग १, २, ३
)५०
...की व्याख्या
२)५०
१)
...ोग
१)
...ार के परे
१)२५
१)२५
...खोज
१)२५
१)
)७५
१)
...ाई और शान्ति
१)
१)२५
...व्याख्या
१)५०
...ता भाग १ व २
२)
१)
...ी खोज
१)
१)
...चास
१)

अनुभव ज्ञान प्रकाश
१)
ज्ञान योग
१)

अन्य धार्मिक पुस्तकें

सत सनातन धर्म या सत
मानव धर्म
३)
)७५
जगत कल्याण
१)७५
विश्व धर्म भाग ... २ व ३
)५०
फकीर वचनामृत
१)७५
कर्म भोग या मौज भाग १व२
राधास्वामी शताब्दी पर
२)५०
मेरी भेट भाग १ व २
१)२५
जगत निस्तार
१)
जगत उभार
मानव कल्याण
६)
भाग १, २, ३, ४, ५
१)
अदभुत मोती
)७५
५० वर्षीय फकीर अनुभव
१)२
मेरा ८३ वर्षीय अनुभव
)८०५
मानवता युग धर्म
)५०
आकाशी रचना
)७५
आजादी की कुंजी
१)५०
शिव फकीर पत्रावली
१)
हृदय उद्गार
१)
कबीर सार शब्द व्याख्या
)७५
रचना का भेद
)२५
नव विवाहितों को उपदेश
)५०
उन्नति मार्ग
२)५०
गूढ़ रहस्य व्याख्या
)७५
फकीर प्रवचन
)२५
सार भेद

पुस्तकें

हमारे यहां

महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज कृत

हिन्दी की आध्यात्मिक, धार्मिक, स्त्री उपयोगी, स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती' सिलसिले के उपन्यास तथा परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें मिलती हैं।

पूरा सूचीपत्र मंगायें।

डाक खर्च सब का अलग है।

पुस्तकें रजिस्टर्ड डाक या रेल से भेजी जाती हैं।

मिलने का पता—

कार्यालय

मनुष्य बनो

शिव भवन, लेखराजनगर,

अलीगढ़ (उ० प्र०)

Printed by S. Mittal, Data Dayal Printers, A

सम्पादक — प्रभुदयाल मीतल

व्यवस्थापक व प्रकाशक—

श्रीमती सुधा मीतल,

शिव भवन, लेखराज नगर

अलीगढ़।

ग्राहक सं० 1495

श्री

परा

दयाल फकीर
मानव धर्म
मानव धर्म
(श्री दुर्गा
आवागवन
सार का सार
रुड़ पुराण
न्त सतगुरु
गम वाणी
तर:
रहमासा
रत शब्द य
र्वाण से परे
हद्दी या अप
श्वर दर्शन
री धार्मिक
महिमा
दना
व पुरुष
तत्व सच
आदि अन्त
पांच नाम की
सत ज्ञान द
नाम दान
उस घर
अगम विक
निर्वाण